REVIEW OF RESEARCH
ISSN: 2249-894X
IMPACT FACTOR : 5.7631(UIF)
VOLUME - 11 | ISSUE - 2 | NOVEMBER - 2021

कृष्णा अग्निहोत्री के लगता नहीं है दिल मेरा आत्मकथा का अनुशीलन

घाडगे वनिता अशोक
एम.ए.एम.एड्.सेट.एम.फिल

कृष्णा अग्निहोत्री की आत्मकथा लगता नहीं है दिल मेरा सन 2010 में प्रकाशित हुई। आत्मकथा के शीर्षक से ज्ञाता होता है कि वह इस भवसागर रूपी संसार से पार उतरना चाहती हैं। लेखिका ने सदैव दूसरों पर विश्वास किया, और दूसरों ने इनके सीधेपन की धज्जियाँ उडा दी। अपने जीवन में पग पग पर धोखा खायी। लेखिका पूर्णतयः टूट चुकी है। डॉ. सरजू प्रसाद मिश्र जी का मानना है कि, ''लगता नहीं है दिल मेरा वही कह सकता है जिसकी जिंदगी और परिवेश 'उजडे दयार' सी हो गई हो।''[1]

लेखिका ने ऐसे परिवार में आँखे खोली जहाँ लडकी को जन्म से ही बोझ समझा जाता था। कृष्णा के जन्म पर उनके पिता को प्रसन्नता नहीं होती और न ही जन्मदायिनी माँ उनको प्रेम करती हैं। लेखिका ने बचपन से ही इस पीडा को झेला। वह लिखती हैं कि '' माँ मुझे प्यार नहीं करती थीं पर मैं अम्मा को हृदय से प्यार? करती थी। शायद माँ तो बच्चों की एक है, बच्चे कई होते है। मैं लडकी क्यों बनी, यह मुझे नहीं पता। यह लडकी कान्य कुब्ज तिवारी के यहाँ क्यों पैदा हुई? उससे पूछा नहीं गया।'' [2] जीवनपर्यंत माँ के स्नेह व प्रेम के लिए मैं तरसती आई।''
कृष्णा के माता– पिता के लिए बच्चो की इच्छाओं और भावनाओ का कोई महत्व नहीं था। वह अपनी इच्छाओं को विशेषकर लडकियों पर लादते थे। वह महसूस करती हैं कि ''किसी को यह चिंता नहीं थीं, मैं क्या चाहती हूँ। मुझे क्या अच्छा लगता है, क्या बुरा लगता है। मै क्या सोचती हूँ।''[3]

लेखिका की बहन के जन्म के समय उनके पिता के चेहरे पर मातम सा छा गया। कृष्णा लडके लडकियों के प्रति भेदभाव से व्यथित हो सोचती हैं कि ''यांनी लडकी लडके से अच्छी नहीं होती। परिवार में लडका होने से ही माँ बाप खुश होते है क्या?''[4]

लेखिका का भाई बचपन से ही उनका विरोधी था। बचपन में बेटी और बेटा में विभेद के कारण लेखिका को सदैव भाई के आगे झुकना पडता था। भाई की मानसिकता को आज वह समझ रही हैं कि ''उसके अव्यक्त मन में मेरे दुखों व मेरी असफलता व जख्मो को देख प्रसन्नता मिलती। आज तक वह मेरी रिसती पीडा से हमेशा दूर भाग एक दर्शक सा मौन खडा मन ही मन मुस्कुराता रहा था।''[5]

पडोस के लडके अवतार सिंह ने बचपन में लेखिका के साथ दुर्व्यवहार करने की कोशिश की, जिसको वह बचपन में समझ नहीं पायी लेकिन आज सोचती है कि '' लड़की का कोमल भोला बचपन भी क्या पुरूष से सहन नहीं होता, वह उसे भी अपने गंदे सुख हेतु चीर देने का आतुर रहता है।''[6] घर के बडे बुर्जुग और नौकर भी अपनी काम इच्छाओं की पूर्ति के लिए अबोध बच्चियों तक को नहीं छोडते हैं। लेखिका के रिश्ते के चाचा ने एक बार उन्हें अपनी हवस का शिकार बनाना चाहा। वह लिखती हैं कि उन्होंने एक बार मौका पाकर ''आव देखा न ताव मुझे कसकर पकड लिया और मेरे नाजुक अनछुए कुंवारे होठो व गालों को पागल से चूमने लगे।

कमसिन दुबली पतली में छटपटाती रही, जलते अंगारों की सी वह जलन थी। रिश्ते में चाचा और इतना बडा कर्म, इतना घिनौना?''[7]

लेखिका के पिता के मित्र ने भी उन पर कुदृष्टि डाली लेकिन वह उनकी नीयत को भांप गई। लेखिका लिखती हैं, कि ''क्या लडकी पैदा होते ही प्रत्येक उम्र व स्थिती में पुरूष के खसोटने की ही वस्तु होती है?''[8]

कृष्णा जी का विवाह सोलह वर्ष की आयु में हुआ। मैट्रिक पास कृष्णा के पति सत्यदेव अग्निहोत्री आई.पी.एस.थे। वह सामंती मनोवृत्ति वाले अहंग्रस्त थे। उनका दापत्य जीवन रसहीन था। उनके पति को शराब, जुआ और परस्त्रीगमिता की बुरी आदत थी। पति के निरर्थक आरोप लेखिका को विचलित कर देते हैं और पतिद्वारा शक किये जाने पर वह उन्हें छोडना चाहती हैं। वह स्वीकारती है कि ''मन करता कैसे भी भागकर किसी भी चाहनेवाले की बांहो में ठहर शांति, सुख, के क्षण ही जी लूँ, लेकिन परिवार,समाज,माता–पिता, संतान के अपने घेरे भी तो कुछ कम दृढ नहीं होते। इसलिए मैं कछुए की भांति अपनी भीतरी तडप को सिकोडती ही गई।''[9]

सत्यदेव अग्निहोत्री जी को एक बार मंत्री जी ने छुट्टी के दिन कोई काम बताया, लेकिन उन्होंने इंकार कर दिया। मंत्री जी ने नाराज होकर रिवरशन का आदेश भिजवा दिया और इन्हें इलाहाबाद से मुरादाबाद जाना पडा। लेखिका सोचती थीं कि अब तो ठोकर खाकर अग्निहोत्री जी सुधर जायेंगे लेकिन ''उन्होंने एक लाइन हाजिर थानेदार से पंगा ले लिया और उसने उन्हें फँसा दिया। इसके पहले किसी आई.पी.एस.ऑफीसर को रंगे हाथों पकडनेवाली 'रेड' नहीं हुई थी, रूपये आदि तो अग्निहोत्री जी कमा नहीं पाये, परंतु बदनामी तो कमा ही ली।''[10]

अग्निहोत्री जी ने आई.जी.की सलाह पर इस्तिफा दे दिया।

लेखिका की शराबी, जुआरी पति के साथ अपना भविष्य अंधकारमय दिखने लगा। वह अपनी पुत्री के भविष्य के लिए चिंतित थी इसलिए उन्होंने आगे पढने का विचार बनाया। लेखिका रात को पति से मार खाती और जब वह मार पीटकर थककर सो जाते तब वह पढती और दिन में परीक्षा देती। लेखिका के पति उनकी पढाई से भयभयीत रहते थे कि कहीं वह आत्मनिर्भर होने पर उनके अत्याचारों पर प्रतिशोध न करने लगे। कृष्णा की मेहनत रंग लाई और उन्होंने हिंदी, अंग्रेजी दोनो विषयों में एम.ए.किया तथा डॉ.शिवमंगल सुमन जी के निर्देशन में रामचंद्र शुक्ल के निबंधो में रस विषय पर शोध किया।

कृष्णा अग्निहोत्री आई.पी.एस. पति की यातनाओं से तंग आकर अपनी बेटी नीहार के साथ अपने मायके खंडवा आ जाती है। पति के घर से लौटी बेटी अपने माता–पिता के लिए बोझ बन गई। पति की अधिक शराब पीने की लत व महिला गमन की प्रवृत्ति के कारण शासन ने उन्हें सस्पैड करने का नोटिस दे देया।

अरविंद जैन जी लिखते हैं, कि ''जुआ, शराब और व्यभिचार की आदत पति को दीमक की तरह खा गई। नौकरी खतरे में। बडे अफसरों द्वारा प्रमोशन के लिए पत्नी की शर्त नही तो ट्रांसफर या डिमोशन। पत्नी अपने रूप और यौवन या पिता के संबंधों और बच्ची के नाम पर आखिर कब तक अफसरों मंत्रियों से रहम की अपील मंजूर करवाती।''[11]

मायके और ससुराल की उपेक्षा एवं प्रताडता से तंग आकर कृष्णा जी कहानी लिखने लगी। उन्होंने अपनी कहानी सारिका में भेजी, छपी नहीं। राजेंद्र अवस्थी ने कहानी लौटाते हुए एक औपचारिक पत्र लिखा जिसमें वह लेखिका से मिलने के लिए कहते है। राजेंद्र अवस्थी पाँच बच्चों के पिता कृष्णा जी को प्रेम जाल में फँसाने का भरसक प्रयत्न करते हैं और उन्हें अपने पति से तलाक लेने के लिए प्रेरित करते हैं। कृष्णा उनकी मंशा भांप कर कहती हैं कि ''मैं रखैल बनकर कभी नहीं जी सकती और आवेश के क्षणों में सुख के लिए मेरी भावना से कोई भी खिलवाड करे तो मुझे अच्छा नहीं लगेगा।''[12]

कृष्णा जी दांपत्य सुख की चाह और पति नामक पुरूष की छत्रछाया में जीवन यापन की अभिलाषा के वशीभूत हो मजिस्ट्रेट श्रीकांत जोग के प्रेमजाल में फँस गई। चार बच्चो के पिता श्रीकांत ने अपने व्यवहार से ही अपनी पत्नी को पागल करार कर दिया था। लेखिका को पागलखाने के डॉक्टरों ने भी श्रीकांत से दूर रहने की सलाह दी थी, लेकिन लेखिकों की आँखो पर जोग के प्रेम की पट्टी बंध गई थी। वह अपनी भूल का अहसास करती हैं कि ''मुझे जोग साहब का सौंदर्य मजिस्ट्रेट की पोस्ट उसकी डिग्निटी तो दिख रही थीं, परंतु उनके घर की गरीबी व चार बच्चों के मैं नजरअंदाज क्यों कर रहीं थी। जिस व्यक्ति के चार बच्चे ही आर्थिक स्थिती

साधारण हो, वहाँ कोई भी औरत कितना समझौता कर सकती है। मैं जब अग्निहोत्री जी के परिवार में सब भुगत चुकी थी, तब भी मेरी आँखे कैसे इस कटु यथार्थ से मुँद गई, पता नहीं।''[13]

श्रीकांत के उकसाने पर वह अपने पति से तलाक लेने की राजी हो जाती हैं। अग्निहोत्री जी ने कृष्णा के चाहने पर तलाक के पेपर पर हस्ताक्षर कर उन्हें आजाद कर दिया।

लेखिका ने मंदिर में जोग के साथ विवाह कर नये संसार में पदार्पण किया। जोग का तबादला जगदलपूर हो गया। लेखिका भी जब उनके साथ चलने लगीं, तो उन्होंने रास्ते में ही कहा कि,
''मैं तलाक के बाद सरला को नहीं छोडूँगा, जब भी डॉक्टर कहेगा, वह घर रहेगी। तुम्हें इससे एडजस्ट करना पडेगा।''[14]

लेखिका गुस्से से पागल हो गई। जोग ने गिरगिट की तरह रंग बदला। वह लेखिका को खंडवा वापस लौट जाने को कहते हैं। लेखिका किंकर्तव्यविमूढ हो असमंजस में पड गई कि ''लोग क्या मजाक बनाएंगे कि जोग ने खा पिकर छोड दिया। निन्नी क्या सोचेगी? पर मेरा जगदलपुर जाने का निर्णय गलत था। श्रीकांत जी ने तो मुझसे रिश्ते तोडने के लिए ही सोचकर यह सब कहा था, परंतु मैंने महज उनकी गफलत या जिद समझ उनके साथ जगदलपूर जाना ठीक समझा।''[15]

श्रीकांत की पदोन्नती होने पर उनके तेवर बदल गये। वह लिखती हैं कि '' श्रीकांतजी सैशन जज क्या बने, अपने घमंड में चूर होकर मुझे पुरी तरह अपमानित एवं लांछित करने का ढंग अपनाने लगे। एक एस.पी. दूसरा सैशन जज ही बनकर रहा पति नहीं।[16]

समाज में अकेली रहनेवाली स्त्री को यह दृष्टि से देखा जाता हैं, तथा प्रत्येक पुरूष उसे अपनी निजी संपत्ति समझाता है, यदि वह विरोध करे तो उसपर झूठे लांछन लगाये जाते हैं। लेखिका अपने दुःख से रू–ब–रू कराते हुए लिखती है कि, '' मैंने तो जिंदगी में यह अहसास किया या कहें कि मुझे अहसास कराया गया कि अकेली रहनेवाली महिला पर प्रत्येक पुरूष अपना अधिकार जमाना चाहता है, किसी की दृष्टि उसके रूपये, जायदाद या किसी की नजर उसके शरीर पर रहती है।''[17]

कृष्णा जी अपने लेखन से किसी कों आहत नहीं करना चाहती हैं, बल्कि उन पर उँगली उठानेवाले समाज को अपनी परिस्थितियों से अवगत कराना चाहती हैं। लेखिका ने भूमिका में लिखा है कि ''बहुत झेला, बहुत भोगा बहुत सहा............ नहीं सहन हुआ तो लिख डाला लिखने का उद्देश्य किसी को दुख पहुँचाना या लांछित करता नहीं है। जो जिसने दिया उतना आज अभिव्यक्त हो ही गया – तब भी यदि किसी को कुछ चोट या दुख पहुँचे तो यह सोचकर कि उसने मुझे कितना बडा घाव दिया, है, मुझे क्षमा दें – क्योंकि मैं अपने आपको विश्लेषित करने के बाद इन गहरे अहसासों को दफन नहीं कर सकी।''[18]

कृष्णा जी ने हिंदी प्रकाशकों की घटिया मनोवृत्ती से विक्षुब्ध होकर रक्त रंजित लेखनी से उनका कच्चा चिट्ठा खोला है। प्रकाशक लेखिका की रचनाओं को छापने के लिए लेते थे, लेकिन अकेलेपन का फायदा उठाकर रायल्टी देने के लिए परेशान करते थे। वह लिखती हैं ''एक अकेली महिला से उन्हें कोई भय नहीं, क्योंकि मैं रॉयल्टी हेतु उनके शहर तक बार–बार रूपया खर्च करके कैसे दम तोड भागूंगी? भारत में सच्चे लेखक का भविष्य किस तरह धुँधला बनाया जाता है।[19]

कृष्णा जी की नियुक्ती म.प्र.के मुख्यमंत्री मंडलोई जी के सहयोग से खंडवा के नव स्थापित महाविद्यालय में हिंदी व्याख्याता के रूप में हुई। डॉ.शंकर दयाल शर्मा ने शिक्षा मंत्री बनते ही लेखिका को नौकरी से निकाल दिया। लेखिका की नियुक्ति गर्ल्स डिग्री कॉलेज खंडवा में हिंदी व्याख्यात के पद पर हुई। लेखिका की प्राचार्या इनका सदैव अपमान करती थीं।

मनुष्य समाज में कितना ही झूठ, फरेब कर ले, लेकिन अपनी अंतर्रात्मा से कुछ नहीं छिपा सकता है। कृष्णा जी अपने पर हुए अत्याचारों को अपनी आत्मा के कठघरे में कसम खाकर कहती हैं कि, ''मेरा बयान नंगा रहे...... एकदम प्राकृतिक साफ! अहसासों की परतें कुछ इस तरह उघडती जाएं कि उनकी बारीक रेखाएं भी बाहर न रहें। जीवन भर लू–लपटों के थपेडे – झेलने के बावजूद आत्मा निश्चित ही इन सबसे प्रभावित नहीं होती। मैं मुक्त मन से उसके सामने अपनी बात की विश्वसनीयता एवं प्रामाणिकता के साथ प्रस्तुत कर सकती हूँ।''[20]

हमारे समाज में प्रतिभावान व्यक्तियों को जो सम्मान मिलना चाहिए, वह उन्हें नहीं मिल पाता, जिस कारण उनका मनोबल टूट जाता है। लेखिका लिखती हैं, कि

'' प्रगति के नगाडे बजाकर इक्कीसवीं सदीं तक पहुँचनेवाला भारतीय पुरूष समाज अब भी— बुद्धीजीवी, कलाकार, प्रतिभाशील महिला और साहित्यकार की वास्तविक सम्माननीय दृष्टि से नहीं देखता। उसके लिए वह इस्तेमाल की वस्तु है, नाटक, प्रेम, बहकावा, और जोर जबरदस्ती से वह उसे अपने अधीन करना चाहता है।'[21]

आज हमारे देश ने प्रत्येक क्षेत्र में विकास किया है, लेकिन स्त्री के प्रति पुंसवादी सोच आज भी ज्यों की त्यो बनी हुई है। समाज अकेली रहनेवाली स्त्री पर तरह तरह के लांछन लगाता है। उसके चरित्र पर उँगली उठाने पर उसे आनंद की प्राप्ती होती है। कृष्णा जी लिखती हैं कि, ''मैंने तपस्या जैसा जीवन जिया परंतु मेरे अपनो व नगर के कुछ संभ्रात लोगों ने मेरा यहां जीना असम्मानीय बनाने का ही कुचक्र रचा.... मेरी ओर सहयोगी हाथ शायद एक या दो हों,पर मुझे तोडनेवालों की यहाँ भीड है, पर यह मेरी कर्मभूमि है।''[22]

अरविंद जैन जी का मान ना है कि, ''वह अपने आपको विश्लेषित करने के बाद इन गहरे अहसासों को दफन नहीं कर सकीं और अपनी मीठी — खट्टी स्मृतियों व अनुभवी की यथावत रख दिया। कहने की जरूरत नहीं कि वे राष्ट्रीय स्तर की लेखिका है। जानी — मानी, प्रसिद्ध, सुपरिचित ''[23]

वह आगे लिखती है कि, ''पुरूष के लिए प्रेम खेल हो सकता है, लेकिन स्त्री के लिए प्रेम उसका संपूर्ण अस्तित्व है। औरतें नहीं जानती कानून की भाषा — परिभाषा इसलिए अक्सर धोखा खा जाती हैं। परंतु पुरूष इस मामलें में बहुत चौकन्ना और चतुर है। ''[24]

अपने जीवन मे पग—पग पर धोखा खाई लेखिका पूर्णतयः टूट चुकी हैं।'' तपती रेत पर नंगे पाँवो के इस सफर में बहुत कुछ 'सफर' करना पडा है। तरह—तरह के अच्छे बूरे सहयात्री या मठाधीश मिले (मिलते है और मिलेंगे), कुछ ऐसे भी जिनकी साहित्य में स्त्री को आने देने के लिए .... एक ही शर्त है .... पहले संग सोओ, फिर हम तुम्हे साहित्य का सितारा बना देगें।''[25]

लेखिका का जीवन काँटो से भरा है। पति का अहं उनको पूर्णतयः तोड देता है। पति से अलग होने के बाद पुरूषों की दूषित निगाहें उनके जीवन को संकटग्रस्त बनाती है। हर किसी पर विश्वास करने के कारण वह पग—पग पर धोखा खाती है।

संदर्भसूची:

1.हिंदी लेखिकाओं की आत्मकथाएँ — डॉ. सरजू प्रसाद मिश्र, पृ.69
2. लगता नहीं है दिल मेरा — कृष्णा अग्निहोत्री, पृ.22
3. वही, पृ.30
4. वही, पृ.34
5. वही, पृ.40
6. वही, पृ.31
7. वही, पृ.52
8. वही, पृ.61
9. वही, पृ.130
10. वही, पृ.144
11.औरत : अस्तित्व और अस्मिता — अरविंद जैन, पृ.143
12. वही, पृ.187
13. वही, पृ.253
14. वही, पृ.258
15. वही, पृ.259
16. वही, पृ.282
17. लगता नहीं है दिल मेरा — कृष्णा अग्निहोत्री, भूमिका, पृ.8
18. वही भूमिका, पृ.7
19. वही, पृ.302
20. वही, पृ.9

21. भूमिका, पृ.8
22. भूमिका, पृ.8
23. औरत : अस्तित्व और अस्मिता – अरविंद जैन, पृ.140
24. वही, पृ.145
25. वही, पृ.146